22

व्यक्तित्व के सिद्धान्त

* डी पी सिंह

प्रस्तावना

जैसा कि पूर्व में वर्णित किया गया है उसी आधार पर, इस अध्याय में संक्षेप में व्यक्तित्व के कुछ सिद्धांतों पर चर्चा की गई है जो कि व्यावसायिक समाज कार्य व्यवहार में प्रासंगिक है। पूर्व की इकाई की व्याख्या से आप व्यक्तित्व शब्द का विभिन्न अर्थ क्या है इसकी व्याख्या करने में सक्षम हो गए होंगे। यह मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण उपक्षेत्र है जिसमें व्यक्तित्व के विषय में शोध मूल्यांकन एवं सिद्धांत का अध्ययन किया जाता है। यद्यपि मनोविज्ञान में भी व्यक्तित्व शब्द के अर्थ पर सहमति नहीं बन पायी है, यहाँ तक कि व्यक्तित्व शब्द के उतने अर्थ हैं जितने मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को परिभाषित करने का प्रयास किया है।

इस अध्याय में, हम कार्ल रोजर्स द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण को समझने का प्रयास करेंगे जिसमें उन्होंने व्यक्तित्व से संबंधित स्व–संगठित, स्थायी, व्यक्तिपरक ज्ञात सत्ता का वर्णन किया है जो कि हमारे सभी अनुभवों के केन्द्र में होता है।

हम एरिक एरिक्सन द्वारा दिए गए सिद्धांत का भी अध्ययन करेंगे जिसमें उन्होंने जीवन सम्बन्धी मनोसामाजिक संकट की श्रृंखला का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है, जो कि विकासात्मक मील का या अवस्था से संबंधित है। एक व्यक्ति के व्यक्तित्व की क्रियाओं के परिणाम में कुछ संकट स्थिर होते है।

अब्राहम मास्लों के मानवतावादी सिद्धांत की भी चर्चा करेंगे जिसमें उन्होंने व्यक्ति के लक्ष्य को प्राप्त करने में व्यक्तिगत प्रवृत्तियों संबंधी मानवीय व्यवहार की व्याख्या की है। जब एक व्यक्ति अपनी पहली आवश्यकता की संतुष्टि कर लेता है तुरन्त ही दूसरी आवश्यकता संतुष्टि के लिए सामने आ जाती है।

बी.एफ. स्किनर उस समय का एक उपयोगी मनोवैज्ञानिक था जिसने व्यवहार के विज्ञान की बुनियाद मुहैया करायी जो कि पर्यावरणीय आकस्मिकताओं के पुनर्बलन द्वारा सीधे हमारे निकट के सभी व्यवहार द्वारा नियंत्रित होता है। सीखने की प्रक्रिया द्वारा हमारा व्यवहार परिष्कत या अधिगमित होता है।

* डॉ. डी पी सिंह, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला, पंजाब

लेकिन तो भी, मानव व्यक्तित्व की मुख्य बुनियादी परिकल्पना सिग्मंड फ्रायड द्वारा प्रस्तुत की गयी है जो कि मनोविश्लेषणात्मक विचारधारा के पिता कहे जाते हैं। इन्होंने व्यक्तित्व की संरचना को इड, इगो तथा सुपर इगो में विभक्त किया है। इनके इस सिद्धांत का अध्ययन हम दूसरी इकाई में विस्तारपूर्वक करेंगे।

एरिक एरिक्सन : व्यक्तित्व का मनोसामाजिक सिद्धांत

इस क्रम में हम समझेंगे कि एरिक्सन ने कैसे मनोविश्लेषण संरचना के सिद्धान्त का निर्माण एवं उसका विस्तार किया और आधुनिक दुनिया की समझ के लिए कैसे इसका सुधरा हुआ सिद्धान्त प्रस्तुत किया, जिसको कि सबसे पहले सिमण्मण्ड फ्रायड ने मनोविश्लेषण की अवधारणा के रूप में दिया था क्योंकि एरिक्सन की मानव विकास की अवधारणा के बारे में दिया गया योगदान फ्रायड की मनोलैंगिक विकास की अवधारणा का एक क्रमिक विस्तार से अधिक कुछ नहीं है।

वास्तव में एरिक्सन ने फ्रायडीयन एवं मनोलैंगिक विकास के बीच जो खाई थी उसको जोड़ने तथा वर्तमान समय में व्यक्तित्व विकास में सामाजिक कारकों की भूमिका के सम्बन्ध में जानकारी देने का प्रयत्न किया।

यद्यपि वे व्यक्तित्व के जैविकीय एवं लिंगीय आधार के प्रति प्रतिबद्ध हैं जैसे फ्रायड। तो भी उन्होंने फ्रायड के विकास सम्बन्धी विचारों को अपने विकास की आठ अवस्थाओं के द्वारा विस्तारित किया। उन्होंने व्यक्तित्व विकास में जैविकीय एवं सामाजिक कारकों के बीच लेने वाली महत्वपूर्ण अन्तःक्रियाओं पर बल दिया। आठ अवस्थाओं का चित्रण चित्र–1 में किया गया है।

आइए अब हम एरिक्सन सिद्धान्त द्वारा निरूपित मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं पर विचार करेंगे।

1) शैशवावस्था : मूल विश्वास बनाम अविश्वास–आशा

एरिक्सन के सिद्धान्त यह पहली मनोसामाजिक अवस्था है जो फ्रायड के मुखावस्था से ली गयी है यह अवस्था मानव जीवन के प्रथम वर्ष के आसपास की होती है। इसी अवस्था में शिशु बालक के मूल विश्वास की स्थापना होती है जो कि उसके अच्छी नींद आने में मूल विश्वास की स्थापना होती है। उसके अच्छी नींद में सोने की क्षमता को प्रदर्शित करती है तथा वह आराम से आहार लेता है और मलत्याग करता है। प्रत्येक दिन उसके जागने के

घंटों में वृद्धि होती है और शिशु ज्यादा अपनापन अपने इंद्रिय अनुभवों से महसूस करता है। जब शिशु लोगों के प्रति सकारात्मक क्रिया अपनाता है तो उसमें पहचानने की क्षमता आती है।

यद्यपि शिशु द्वारा निरन्तरता, एकरूपता और स्थिरता का अनुभव अन्य लोगों से होने पर यह उन पर विश्वास करना सीखता है और उसमें विश्वास करता है। साथ–साथ यदि अभिभावकों द्वारा उक्त अनुभवों में अनुरूपता नहीं पायी जाती है। तो इसका परिणाम शिशु में अविश्वास की भावना उत्पन्न होती है।

इस अवस्था में प्रत्याशा पहली मनोसामाजिक योग्यता या गुण है जो शिशु विश्वास बनाम अविश्वास के मध्य संघर्ष द्वारा दृष्टता से स्वतंत्रतापूर्वक अर्जित किया जाता है।

2) प्रारम्भिक बाल्यावस्था : स्वतंत्रता बनाम शर्म और संदेह

यह अवस्था फ्रायड के गुदा अवस्था के अनुरूप है और यह मानव के दूसरे और तीसरे वर्ष की अवस्था कही जा सकती है। इस अवस्था के बीच में बालक यह सीखता है कि उससे क्या अपेक्षाएँ हैं, बालक के रूप में उसके कर्तव्य और अधिकार तथा उसकी क्या सीमाएँ हैं। इस अवस्था में वह नए प्रयत्न करता है और प्रयत्न प्रदर्शन के द्वारा होता है। जिसके माध्यम से स्व–नियंत्रण का विचार बालक में आने पर उसमें स्वतंत्रता की स्थायी भावना, सद्भावना और गर्व की अनुभूति होती है। यदि स्वनियंत्रण नहीं आ पाता है तो उसमें संदेह की भावना भर जाती है।

इस अवस्था का मुख्य गुण इच्छाशक्ति की उत्पत्ति है। इच्छाशक्ति में वृद्धि होने पर बालक में मनोसामाजिक दृढ़ता आती है जिससे कि उसमें स्वनियंत्रण का व्यवहार, निर्णय लेने तथा मुक्त होकर सोचने की क्षमता आती है। बालक स्वयं तथा अन्य के द्वारा यह सीखता है कि उससे क्या उम्मीद की जाती है क्या नहीं। बालक द्वारा क्रमिक रूप से आवश्यक और न्यायपूर्ण बातों को ग्रहण करने हेतु इच्छाशक्ति जिम्मेदार होती है।

3) खेल की अवस्था : पहल प्रवृत्ति बनाम अपराध बोध

यह अवस्था फ्रायड के प्रजनन कामावस्था से ली गयी। यह अवस्था चार वर्ष की आयु से स्कूल जाने की अवस्था होती है तथा लोगों से दुनियाँ की चुनौतियों से निपटने हेतु नये तरीके सीखता है तथा लोगों से उसके सम्बन्ध में अनुमोदन प्राप्त करता है। इस अवस्था में बच्चा जहाँ तक हो सकता है अपने बराबर का तथा बड़े लड़कों के साथ गतिक निपुणता

सीखता है जिससे उसमें विभिन्न सामाजिक क्रियाओं में भाग लेना आ जाता है। इस अवस्था में शिशु लड़का एवं लड़की में अन्तर करने लगता है। यह अवस्था पहल करने की, ज्यादा ज्ञान प्राप्त करने की तथा उत्तरदायित्व ग्रहण करने की होती है। स्वायत्तता पहल की प्रवृत्ति के साथ होती है। जो बच्चे को उद्देश्य एवं लक्ष्य को प्राप्त करने में उसके निर्धारण, नियोजन एवं लक्ष्य को समझने की गुणवत्ता प्रदान करते हैं। यदि बच्चे में अपने उद्देश्य एवं लक्ष्य के प्रति उक्त गुण नहीं होते हैं तो हो सकता है उसमें अपराध बोध की भावना आ जाय।

इस अवधि में मनोसामाजिक दृढ़ता मुख्य रूप से उत्पन्न होती है या उद्देश्यों को प्राप्त करने का गुण विकसित होता है। बालक की सर्वाधिक गतिविधियाँ इसी अवस्था में होती हैं। खिलौने के द्वारा बच्चा खोजी, कार्य करना, हताशा तथा प्रयोगात्मक होना सीखता है जो उद्देश्य को प्राप्त करने के गुण के उत्पन्न होने का परिणाम है। बालक द्वारा किसी चीज का क्या उद्देश्य है तथा आंतरिक एवं बाह्य दुनिया के बीच सम्बन्धों को पहचानना सीखता है। अतः बालक के विकास के लिए एक कल्पनाशील एवं बिना अवरोध के खेल बहुत ही महत्वपूर्ण है।

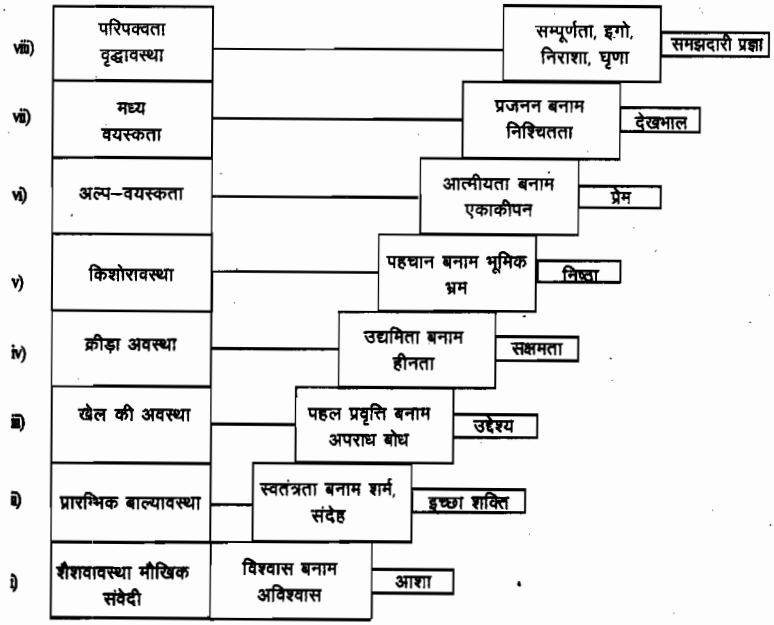

चित्र : 1 एरिक्सन के मनोसामाजिक विकास की आठ अवस्थाओं का चित्रण

(एरिक एच. एरिक्सन, 1963 ए.पी. 273, के चाइल्डहुड एण्ड सोसाइटी से लिया गया है।)

4) क्रीड़ा अवस्था : उद्यमिता बनाम हीनता

यह अवस्था फ्रायडीय सिद्धान्त के अप्रकटता की अवस्था से लिया गया है और यह अवस्था 6 वर्ष से 11 वर्ष के बीच की अवस्था होती है। इस अवस्था में बच्चा औपचारिक शिक्षा द्वारा पहली बार पढ़ना, लिखना, अन्य व्यक्तियों के साथ सहयोग आदि का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करना सीखता है। इस अवधि में बच्चे में तर्क करने की शक्ति में वृद्धि एवं स्व–अनुशासन आता है तथा इसी तरह वह अपने सहपाठियों से भी वर्णित नियमों के अनुसार व्यवहार करता है। इस अवधि में बच्चा स्कूल के द्वारा अपने संस्कृति के तकनीकी पक्ष को समझाता है जिससे उसमें उद्यमिता की सोच विकसित होती है अर्थात् उसका कार्य स्कूल जाना, घर पर कार्य करना, उत्तरदायित्व ग्रहण करना, संगीत सीखना, मानवीय कुशलताएँ सीखना एवं खेलों में भागीदारी करना सम्मिलित हो जाता है। अगर बच्चा इन उपर्युक्त कार्यों को सीख पाने में अपने आप को असमर्थ पाता है तो यह इस अवस्था में हीनता से अक्षमता का शिकार हो जाता है जिसे इस अवस्था का दुष्परिणाम कहा जा सकता है।

इस अवस्था का गुण बच्चे में क्षमता का विकसित होना है क्योंकि यहाँ पर वह अपने आपको कार्य के प्रति समर्पित करता है और कार्य पूरा करना सीखता है।

5) किशोरावस्था – पहचान बनाम भूमिका भ्रम

यह अवस्था व्यक्ति के मनोसामाजिक विकास में सबसे महत्वपूर्ण समझी जाती है। अब न तो वह बच्चा है और न ही वयस्क। यह अवस्था 12 या 13 वर्ष की उम्र से 20 वर्ष की उम्र तक रहती है। इस उम्र में एक किशोर को समाज की विभिन्न माँगों तथा भूमिकाओं में परिवर्तन का सामना करना पड़ता है जो कि वयस्कता की चुनौतियों का सामना करने के लिए आवश्यक है। यह समय व्यावसायिक योजनाओं को बनाने के लिए होता है। वह अपने अन्दर निहित विशेषताओं जैसे– उसकी पसन्द एवं नापसंद, भविष्य के पूर्वानुमानित लक्ष्य और अपने भविष्य पर नियंत्रण की शक्ति और उद्देश्य के बारे में जागरूक होता है। इसी अवस्था में वह परिभाषित करता है कि वह वर्तमान में वह क्या है और भविष्य में क्या बनना चाहता है। बचपन से वयस्कता के इस सन्धिकाल में, जो एक किशोर की पहचान निर्माण की अवस्था है, भूमिका निर्वहन में भ्रम या पहचान में भ्रम में सबसे ज्यादा प्रभावित होता है। इस अवस्था में वह अपने आपको अकेला, खाली, चिन्तित और अनिश्चितता की स्थिति में पाता है। किशोर यह महसूस कर सकते हैं कि उन्हें निर्णय लेने के लिए मजबूर किया जा रहा है और वे पहले से अधिक विरोधी बन सकते हैं किशोरों का व्यवहार इस अव्यवस्थित अवस्था में सामंजस्य और अननुमेय होता है। इस दौरान किशोर के अन्दर घृणात्मक पहचान भी विकसित हो सकती है कि वह निकृष्ट और अयोग्य है।

इस अवस्था में कर्तव्यपरायण और ईमानदारी का सद्गुण विकसित होता है। यद्यपि वह लैंगिक रूप से परिपक्व और जिम्मेदार हो जाता है परन्तु वह सन्तानोत्पत्ति के लिए पूर्ण रूप से तैयार नहीं होता है। एक तरफ तो उससे वयस्कों जैसे व्यवहार की आशा रखी जाती है वहीं दूसरी तरफ उसे एक वयस्क की भांति लैंगिक स्वतंत्रता नहीं प्रदान की जाती। इस कठिन अवस्था में युवा आन्तरिक ज्ञान स्वयं को समझने की समझ खोजता है और मूल्यों को प्रतिपादित करने की कोशिश करता है। मूल्यों का वह समूह जो उत्पन्न होता है एरिक्सन उसे कर्तव्यनिष्ठा एवं ईमानदारी की संज्ञा देते हैं और इसी की नींव पर वह अपनी पहचान बनाते हैं।

6) अल्पवयस्कता : आत्मीयता बनाम एकाकीपन

यह अवस्था वयस्क जीवन की औपचारिक शुरुआत है। यह सामान्यतः वह अवधि होती है जब व्यक्ति प्रणय निवेदन, विवाह एवं प्रारम्भिक पारिवारिक जीवन में सम्मिलित होता है। यह अवस्था किशोरावस्था के अन्त से वयस्कता अर्थात 20 वर्ष से लगभग 24 वर्ष चलती है। अब व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ सामाजिक एवं लैंगिक आत्मीयता के लिए तैयार हो जाता है। अब वह जीवन में "स्थिरता" लाने की तरफ अभिमुख होता है। यह वह समय है जब उसे किसी को प्यार करते, किसी के साथ लैंगिक सम्बन्ध बनाने जिसके साथ वह विश्वसनीय सम्बन्ध बाँट सकता है, की आवश्यकता होती है।

इस अवस्था की बाधा एकाकीपन है, अर्थात् सम्बन्धों से दूर रहना क्योंकि वह आत्मीयता के साथ समझौता करना नहीं चाहता। यह अवस्था 'प्रेम' के सद्गुण की होती है। प्रेम को दूसरों के प्रति समर्पित होने की योग्यता मानते हैं जिसमें देखरेख, आदर और जिम्मेदारी की भावना निहित है।

7) मध्य वयस्कता : प्रजनन बनाम निश्चितता

यह अवस्था जीवन के मध्य वर्षों में 25 वर्ष से 65 वर्ष के मध्य होती है। इस अवस्था में प्रजनन होता है जब व्यक्ति न सिर्फ आने वाली पीढ़ियों के विषय में चिन्तित होता है बल्कि उस समाज के विषय में भी सोचता है जिसमें भावी पीढ़ी जीवन बिताएगी और कार्य करेगी। यह अवस्था मुख्यतः सन्तान उत्पत्ति, उत्पाद, विचार इत्यादि से सम्बन्धित होती है। जब प्रजनन क्षमता कमजोर होने लगती है या प्रकट नहीं होती है, तो व्यक्ति में स्थिरता आती है। इस अवस्था में देखभाल का सद्गुण विकसित होता है जो दूसरों के प्रति की गयी चिन्ता में व्यक्त होता है।

8) परिपक्वता : सम्पूर्णता बनाम निराशा

इस अवस्था को हम ऐसे स्तर की संज्ञा दे सकते हैं जहाँ व्यक्ति लोगों, चीजों, उत्पादों, विचारों की देखभाल एवं जीवन की सफलताओं एवं असफलताओं के अनुभवों के साथ समायोजित होने के बाद पहुँचता है। यहाँ व्यक्ति का ध्यान भविष्य से हट कर अपने बीते हुए जीवन पर केन्द्रित होता है। यह ऐसा समय है जब व्यक्ति अपने आपको अनगिनत माँगों से घिरा हुआ पाता है जैसे गिरती हुई शारीरिक क्षमता और स्वास्थ्य, सेवानिवृत्ति और आय में कमी, जीवन साथी और अभिन्न मित्रों की मृत्यु और अपने उम्र के लोगों के साथ नए सम्बन्धों का जुड़ाव। यह मानव विकास की पिछली सभी अवस्थाओं का संकलन, समेकन और मूल्यांकन है। सम्पूर्णता के एक आवश्यक अंग के रूप में व्यक्ति के जीवन में अपरिपूर्ण अवसरों और खोई हुई दिशाओं के सम्बन्ध में निराशा का जन्म होता है। उसको यह महसूस होता है कि अब नई शुरुआत करने के लिए बहुत देर हो चुकी है। व्यक्ति के अन्दर मृत्यु का भय, अपरिवर्तनियता असफलता की भावना और एक निरन्तर तल्लीनता की भावना जो किया जा सकता है की तरफ रहती है।

सम्पूर्णता और निराशा का सामना करने के पश्चात् 'समझदारी' का सद्‌गुण विकसित होता है। एरिक्सन विश्वास करते हैं कि वृद्धावस्था में ही सच्ची परिपक्वता का विकास होता है।

काल रोजर्स : व्यक्तित्व का दृश्य प्रपंच शास्त्र (फेनोमेनोलोजिकल) सिद्धान्त

रोजर्स का व्यक्तित्व का स्व सिद्धान्त उनके 'सेवार्थी–केन्द्रीत उपचार' अभिगम पर आधारित हैं। वे व्यक्ति की महत्ता पर जोर डालते हैं जो अपने भविष्य का निर्धारण स्वयं करता है। उनका सिद्धान्त दो महत्वपूर्ण आधारों पर आधारित है।

(क) जीव (ख) स्वयं

किसी व्यक्ति के भीतर किसी विशिष्ट क्षण में होने वाले समस्त अनुभवों का केन्द्र जीव होता है। ये अनुभव जीव के भीतर किसी क्षण हो रहे सभी जागरूकताओं को जो उसको उपलब्ध है, को भी सम्मिलित करता है। इन सभी अनुभवों की सम्पूर्णता 'फेनोमेनाल क्षेत्र' का निर्माण करती है। 'फेनामनेल क्षेत्र' चेतनता के समान नहीं होता। एक निश्चित समय में यह चेतना या सांकेतिक अचेतन या असांकेतिक अनुभवों से निर्मित होता है। 'फेनोमिना

क्षेत्र' व्यक्ति के संदर्भों के क्षेत्र से सम्बन्धित है जो केवल व्यक्ति द्वारा ही जाना जाता है। रोजर्स के अनुसार एक व्यक्ति का व्यवहार फेनोमिना क्षेत्र (जो विषयगत वास्तविकता) पर निर्भर करता है न कि बाह्य परिस्थितियों पर। एक व्यक्ति का ज्ञान और अनुभव न केवल उसकी वास्तविकता का निर्माण करते हैं परन्तु उसकी क्रियाओं का आधार भी बनते हैं। व्यक्ति घटनाओं का उत्तर उसी प्रकार देता है जिस प्रकार वह उसे देखता और समझता है।

उदाहरण के लिए रेगिस्तान में खोया हुआ एक प्यासा व्यक्ति उत्सुक होकर पानी के तालाब की तरफ वैसे ही दौड़ेगा जो कि मृगजल है जैसे कि वास्तविक पानी के तालाब की ओर। इसी तरह दो व्यक्ति जो एक ही तरह की घटनाओं को देखते हैं बाद में दो विभिन्न परिणामों की व्याख्या कर सकते हैं जो कि अक्सर उड़न तश्तरी और सड़क दुर्घटनाओं के चश्मदीद गवाहों के साथ होता है। इस तरह व्यक्ति अपने प्रतीकात्मक अनुभवों को सांसारिक अनुभवों के साथ ही अपनी तरह से मिलाने का कार्य करता है। वास्तविकता की यह जाँच उसे संसार का विश्वसनीय ज्ञान प्रदान करती है जिससे उसके अंदर यथार्थ रूप में व्यवहार करने की क्षमता उत्पन्न होती है। परन्तु कुछ अनुभव अमूल्यांकित रह जाते हैं या उचित रूप से मूल्यांकित नहीं हो पाते जिससे व्यक्ति काल्पनिक रूप से व्यवहार करने लगता है। अतः व्यक्ति को उपरी तौर से बाह्य यथार्थता की कुछ संकल्पना होनी चाहिए अन्यथा वह यथार्थ के अन्दर की तस्वीर का बाह्य के साथ मूल्यांकन का कार्य नहीं कर सकता।

इसको हम एक अन्य उदाहरण की सहायता से समझ सकते हैं। मान लीजिए, एक व्यक्ति अपने भोजन में नमक डालना चाहता है और उसके सामने दो एक जैसे जार रखे हैं, जिसमें एक में नमक हैं और दूसरे में मिर्च। व्यक्ति यह विश्वास करता है कि जार जिसके ढक्कन में ज्यादा छेद है नमक है परन्तु पूर्ण विश्वास न करके जार में रखे पदार्थ को अपने हाथ में लेता है। अगर हाथ में आए कण काले की जगह सफेद है तो उसे पक्का विश्वास हो जाता है कि यह नमक है, परन्तु अत्यन्त सावधानी बरतने वाला व्यक्ति, उसके बाद भी, कुछ कण अपनी जीभ पर रखकर यह जाँचने का कार्य करता है कि नमक की जगह कहीं यह सफेद मिर्च तो नहीं है। अतः यहाँ पर देखने योग्य बात है कि व्यक्ति अपने विचारों का विभिन्न प्रकार के इन्द्रीय आँकड़ों के विरूद्ध मूल्यांकन कर रहा है। इस परीक्षण के माध्यम से कम अनिश्चित सूचना को प्रत्यक्ष ज्ञान के विरूद्ध मूल्यांकित किया जा रहा है।

प्रत्यक्षीकरण अनुभवों की प्रक्रिया के बाहर, उनमें अर्थ जोड़ना तथा वाह्य वास्तविकता के साथ उनका परीक्षण फेनोमिना क्षेत्र के एक भाग का उदय करता है जो धीरे–धीरे अलग होता जाता है और इसे ही 'आत्म' कहते हैं। आत्म को मैं, मेरे तथा मुझमें

की अवधारणा द्वारा सर्वश्रेष्ठ रूप से समझा जा सकता है। आत्म (जिसे वास्तविकता आत्म भी कहते हैं) के अतिरिक्त एक आदर्श आत्म आत्म संप्रत्यय का प्रतिनिधिव करता है। आदर्श आत्म उस संप्रत्यय का प्रतिनिधित्व करता है जो एक व्यक्ति में उपस्थित होता है जो फ्रायड के सिद्धान्त के पराहम के बहुत नजदीक है।

जीव और स्वयं की इन आवधारणाओं की महत्ता को स्पष्ट करते हुए रोजर्स ने कहा कि स्वयं जैसा कि देखा है और जीव के वास्तविक अनुभव के सामंजस्य और असामंजस्य की विवेचना से अधिक स्पष्ट होता है। जब जीव के प्रतीकात्मक अथवा चेतन अनुभव जो स्व का निर्माण करते हैं जीव के अनुभवों के समरूप होते हैं तो व्यक्ति समायोजित, परिपक्व और सक्रिय होता है। जबकि दूसरी तरफ जीव और स्वयं के अनुभवों में कोई सामंजस्य नहीं है तो व्यक्ति भयभीत और चिन्तित महसूस करता है ऐसा व्यक्ति सुरक्षात्मक ढंग से व्यवहार करता है और कठोर होता है।

अतः हम देखते हैं कि रोजर्स का सिद्धान्त विकास की निरन्तरता पर विशेष बल देता है। व्यक्ति के निरन्तर स्व को विकसित करते हुए प्रयासरत रहता है। वह अपने संदर्भ में ढाँचे में केवल उन्हीं अनुभवों को सम्मिलित करता है जो यह समझता है कि उनके लिए उचित हैं और उन्हें नकार देता है जो अनुचित है। अतः रोजर्स के सिद्धान्त में व्यक्तित्व विकास, व्यक्ति के अपने अनुभवों को देखने और उसके वास्तविक, सामाजिक एवं अन्तर्वैयक्तिक अनुभवों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध हैं।

अब्राहम मास्लो : व्यक्तित्व का मानवीय सिद्धान्त

मास्लो मानवतावादी थे। वे स्वयं तथा मानवजाति को संसार में अच्छा कार्य कर सकने में विश्वास करते थे। इनका मानवीय व्यक्तित्व को व्यवहार के द्वारा समझने का बी.एफ. स्कीनर (आगे वर्णित) एवं मनोविश्लेषकों से भिन्न था। उन्होंने कहा कि मानव प्राणी चाहने वाला प्राणी है जो कि कभी–कभी ही सीधे रूप से पूर्ण संतुष्ट होता है। मानव जीवन की सभी समय कुछ पाने की इच्छा सम्बन्धी विशेषता होती है। यदि एक इच्छा की संतुष्टि होती है तो बाकी रह जाती है। मास्लो कहते हैं कि बिना निम्न क्रम की आवश्यकता से संतुष्ट हुए बगैर एक व्यक्ति कैसे उच्च क्रम की आवश्यकता के प्रति जागरूक हो सकता है। उन्होंने सामान्यता, मानव की स्वाभाविक इच्छाओं/आवश्यकताओं को एक सोपान द्वारा क्रमबद्ध किया है। इन्होंने आवश्यकताओं की अपनी व्यवस्था की है जो कि दो श्रेणियों में श्रेणीबद्ध हैं :

क) कमी की आवश्यकता।

ख) वृद्धि की आवश्यकता।

कमी की आवश्यकता में काम, निद्रा, सुरक्षा सम्मिलित है जिसके द्वारा उच्च संवेदी प्रेरक की उत्पत्ति होती है। यह आवश्यकता सभी मानवीय प्राणियों को शारीरिक रूप से लड़ने हेतु मूल, शक्तिशाली एवं स्पष्ट होती है। दूसरी श्रेणी की आवश्यकता में बचाव, अपनत्व तथा प्यार की आवश्यकता, सम्मान की आवश्यकता तथा आत्मविश्लेषण भी सम्मिलित होती है।

अब संक्षेप में मास्लो की आवश्यकताओं को श्रेणीबद्ध रूप में नीचे से ऊपर के क्रम में वर्णन किया जाएगा :

1) शारीरिक आवश्यकताएँ

यह आवश्यकता प्राणियों के शारीरिक रख–रखाव से प्राथमिक रूप से सीधे सम्बन्धित हैं जिससे वे सूक्ष्म रूप से आनन्द प्राप्त करते हैं। एक व्यक्ति अगर मूल आवश्यकताओं को प्राप्त करने में असफल होता है तो वह कैसे ऊपर की उच्च आवश्यकताओं से संतुष्ट होने के योग्य होगा। उदाहरणार्थ, एक बहुत भूखा व्यक्ति संगीत सीखने, राजनीति में जाना तथा कोई नया रचनात्मक सिद्धान्त विश्व व्यवस्था हेतु नहीं बना सकता है। बिना किसी संदेह के मानवीय व्यवहार भौतिक आवश्यकताओं के छानबीन से समझा जा सकता। बहुत से आत्मकथाओं एवं अनुभवों का वर्णन इतिहास में है जो बताता है कि भोजन और पानी की कमीं में उनके व्यवहार पर गलत प्रभाव डाला है। उदाहरणार्थ ध्यान केन्द्रीत करने वाले नाणी के शिविर में जो कि द्वितीय विश्वयुद्ध में लगाया गया था। यह एक सामान्य बात थी कि जो कैदी लम्बे समय से वतन से ग्रस्त थे तथा अपने नैतिक स्तर मुक्त करने के लिए उन्हें प्रताड़ित किया जाता था तथा वे एक दूसरे का खाना चुराते थे।

2) सुरक्षा आवश्यकताएँ

जब भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति व्यक्ति को सफलतापूर्वक हो जाती है तो वह सुरक्षा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आगे आता है। सुरक्षा आवश्यकता आदेश एवं बचाव के रख–रखाव से सम्बन्धित है। यहाँ प्राथमिक प्रेरक शक्ति अपने पर्यावरण के साथ निश्चितता क्रम संरचना एवं पूर्व कथन को निश्चित करता है। मास्लो ने सुझाव दिया कि यह आवश्यकता बच्चों एवं बड़े बच्चों में महसूस की जाती है, क्योंकि उसके सम्बन्ध और निर्भरता वयस्कों पर होती है। उदाहरणार्थ यदि बच्चे यकायक अकेले छोड़ दिया जाय तो वह डरता है तथा तेज़ आवाज़ या रोशनी चमकाने पर चौंकाता है, तो भी सुरक्षा सम्बन्धी आवश्यकता बाल्यावस्था की आयु के बाहर भी अपना सक्रिय प्रभाव छोड़ता है। वह उसमें निहित सरक्षा एवं वित्तीय संरक्षण को वरीयता देता है नौकरी को चुनते समय उसमें

निहित सुरक्षा एवं वित्तीय संरक्षण को वरीयता देता है वह बैंक खाता, भवन को खरीदना, स्वास्थ्य सुविधा हेतु जीवन बीमा में निवेश करता है जिससे बेरोजगारी या वृद्धावस्था के समय उसका भविष्य सुरक्षित रहे।

3) अपनत्व एवं प्यार की आवश्यकता

मास्लो द्वारा बतायी गयी मानव की यह अवश्यकता की तीसरी सीढ़ी है जो कि पहली एवं दूसरी आवश्यकता की सीढ़ी को पूरा करने के बाद आती है। यह आवश्यकता मानव द्वारा सामूहिक जीवन में अपनी पहचान पर जोर देती है जो कि उसकी मूल मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति होती है। इस आवश्यकता के अन्तर्गत वह समाज के अन्य सदस्यों से सम्बन्ध बनाता है तथा किसी संगठन तथा परिवार की स्वीकारोक्ति चाहता है। यदि समूह की सदस्यता व्यक्ति को नहीं मिलती है तो उसमें अकेलापन, समाज द्वारा बहिष्कृत, बिना दोस्तों के तथा अस्वीकार भावना आ जाती है। मास्लो ने फ्रायड के इस विचार को अस्वीकार कर दिया कि प्यार और अपनापन काम की मूलप्रवृत्ति द्वारा होती है। उनका विचार था कि प्यार काम का पर्यायवाची नहीं है लेकिन दो व्यक्तियों के बीच परिपक्व प्यार में स्वस्थ्य प्यार समाहित रहता है। प्यार के द्वारा तथा उसको स्वीकार करने से उसमें स्वस्थ भावना का गुण आता है। प्यार न होने की स्थिति में उसमें निरर्थकता, खालीपन तथा शत्रुता उत्पन्न होती है।

4) स्वाभिमान की आवश्यकता

एक व्यक्ति प्यार की आवश्यकता तथा अन्य लोगों के साथ प्यार की आवश्यकता जब पूरी होती है तो स्वाभिमान की आवश्यकता जन्म लेती है। यह आवश्यकता दो समूहों में विभाजित है, (क) स्व सम्मान, स्व आदर एवं स्व मूल्यांकन (ख) दूसरों के द्वारा आदर सम्मान। पहले समूह में सक्षमता विश्वास, व्यक्तिगत संघर्ष, सलाह, कुछ पाने, आत्मनिर्भरता तथा स्वतंत्रता के विचारों की इच्छा सम्मिलित होती है। लक्ष्य प्राप्त करने की क्षमता तथा जीवन में चुनौतियों के सम्बन्ध में व्यक्तिगत गुणों के बारे में उसकी (पुरुष/स्त्री) आवश्यकताओं को जानता है।

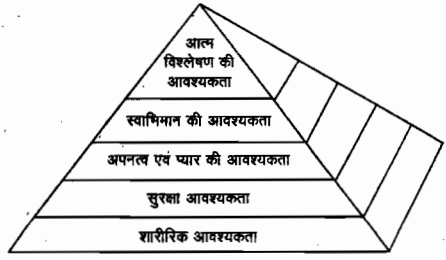

चित्र : 2 मास्लो की आवश्यकता की अनुक्रम सिद्धान्त का चित्रण

दूसरे समूह में स्वयं की प्रतिष्ठा, पहचान, स्वीकारोक्ति, ध्यान प्रस्थिति, यश, नाम कमाना, और प्रशंसा सम्मिलित है। इस समय व्यक्ति क्या कर सकता है इसके लिए स्वयं को जाँचता है इस स्थिति में व्यक्ति को वे क्या कर सकते हैं इसके लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है अर्थात् वे स्वयं के प्रति सम्मान का अनुभव करें क्योंकि दक्षताओं को मान्यता दिया जाना तथा उनके मूल्य दूसरों के लिए महत्वपूर्ण हैं।

5) आत्म विश्लेषण की आवश्यकता

यदि सभी पिछली आवश्यकताएँ सफलतापूर्व तुष्ट हो जाती हैं तो अन्त में आगे आने वाली आवश्यकता कि विशेषता यह बताते हैं कि आत्मविश्लेषण व्यक्ति में सब कुछ की इच्छा एवं उसको पाने की क्षमता के रूप में उत्पन्न होती है। वह परिपूर्णता चाहता है। वह कार्य करने की ऊँचाई पर पहुँचना चाहता है। आत्मविश्लेषण की स्थिति तभी संभव है जब नीचे स्तर की मूलभूत आवश्यकताएँ उचित मात्रा में पूरी हों, इससे न ध्यान हटाया जाय और न ही सभी उपलब्ध ऊर्जा का कहीं और उपयोग किया जाय। व्यक्ति को अपने अस्तित्वपरक आवश्यकताओं के सम्बन्ध में चिन्ता नहीं करनी चाहिए। उसे अपने परिवार समाज एवं कार्य से सम्बन्धित सम्बन्धों से संतुष्ट होना चाहिए।

अतः ऐसी आवश्यकताएँ जो हमारे दिमाग में आती है मास्लो ने उसे एक क्रमबद्ध रूप में बताने का प्रयत्न किया है। पहले स्वाभिमान की आवश्यकता तब पूरी होती है जब प्यार और अपनत्व की आवश्यकता से संतुष्टि होती है और जब बचाव और सुरक्षा की आवश्यकता से संतुष्टि होती है तभी प्यार एवं अपनत्व की आवश्यकता उत्पन्न होती है। इसका दूसरा पक्ष यह है कि यदि नीचे स्तर की मूल आवश्यकताओं पर यकायक कोई विपत्ति आती है तो तुरन्त उच्च स्तर की आवश्यकता नीचे स्तर पर आ जाती है। उदाहरणार्थ–एक महिला जो यह सोचती है कि उसके पति को उसकी सहायता की बहुत आवश्यकता है उसने स्वयं को एक उच्च व्यावसायिक बनाने के लिए व्यस्त कर लिया। अचानक और अपेक्षा के विपरीत उसके पति ने उसे छोड़ दिया। ऐसी परिस्थिति में वह क्या करती है कि वह अपने स्वाभिमान से सभी क्षेत्रों (इस परिस्थिति में व्यवसाय) तथा अपने पति को पुनः प्राप्त करने के प्रयास में ग्राहक प्रवृत्ति की हो जाती है अर्थात उसकी सभी आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास करती है। एक बार वह जब इस सम्बन्ध में पुनर्स्थापित हो जाती है या उसका बेहतर विकल्प विकसित कर लेती है वह पुनः व्यावसायिक जगत में जुड़ जाने के लिए स्वतंत्र हो अपने आप सकेंद्रित हो जाती है।

बी.एफ.स्कीनरः व्यक्तित्व का व्यवहारवादी–शिक्षण का सैद्धान्तिक दृष्टिकोण

प्रत्येक सिद्धान्त में संरचनात्मक अवधारणाओं पर बल दिया गया है। सिग्मण्ड फ्रायड (जिसका अध्ययन आप अगले कई इकाई में करेंगे) ने संरचनात्मक अवधारणाओं में इड, इगो, और सुपर इगो रोजर्स ने स्वयं एवं आदर्श स्वयं तथा मास्लो ने मानव की मूल आवश्यकताओं को उसके व्यवहार की व्याख्या कर अपना सिद्धान्त दिया है। स्कीनर दृष्टिकोण को व्यक्तित्व के व्यवहारवादी दृष्टिकोण के नाम से जाना जाता हैं, जो व्यक्तित्व के प्रक्रिया एवं स्थैतिक विशेष की अवधारणाओं को ध्यान में रखकर बताया गया है। संक्षेप में सिद्धान्त मान्यताओं पर आधारित होने के कारण अन्य सिद्धान्तों से भिन्न है, इसकी मुख्य विशेषताएँ पहले के दिए गए विचारों से अलग हैं।

स्कीनर का सिद्धान्त यह है कि व्यक्ति का व्यवहार, कार्यों का कौशल तथा समाज में दण्ड पर आधारित प्रक्रिया है। व्यवहारवादी स्कीनर के उपागम को व्यक्तित्व के व्यवहारवादी दृष्टिकोण के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त हुई है तथा इसमें प्रमुख रूप से प्रक्रियाओं एवं परिस्थितिक विशिष्टताओं की अवधारणाओं पर जोर दिया गया है। सारांश रूप में चूँकि यह सिद्धान्त अन्य सिद्धान्तों से भिन्न मान्यताओं पर आधारित है, इसलिए इस सिद्धान्त की अविचारिक विशेषताएँ अभी तक अध्ययन किए गए सिद्धान्तों से भिन्न हैं।

स्कीनर का क्रियात्मक अनुबन्धन प्रक्रिया का आधार यह है कि व्यवहार पर नियंत्रण पर्यावरण के पुरस्कार एवं दण्ड के प्रबन्ध कौशलों के माध्यम से होता है। व्यवहारवादी दृष्टिकोण की सबसे महत्वपूर्ण संरचनात्मक इकाई प्रत्युत्तर है। प्रत्युत्तर की प्रकृति का प्रसार एक सरल प्रत्यावर्तन जैसे भोजन के लिए लार स्राव से एक जटिल व्यवहार के टुकड़े जैसे एक अंकगणित के जोड़ तक हो सकता है। स्कीनर की योजना में प्रत्युत्तर एक वाह्य, अवलोकन योग्य व्यवहार के टुकड़ें का प्रतिनिधित्व करता है जो पर्यावरणीय घटनाओं से सम्बन्धित हो सकता है। जानकार उत्तेजक द्वारा चयनित प्रत्युत्त तथा ऐसे उत्तेजक जो किसी उद्दीपक से सम्बन्धित नही हैं के प्रत्युत्तरों में भिन्नता पायी जाती है। बाद के श्रेणी में जीव द्वारा दिए गए प्रत्युत्तर दिये जाते हैं तथा ये प्रकृति से जैविकीय होते हैं। उदाहरणार्थ कुत्ता दौड़ता है या चलता है, चिड़िया उड़ती है, बन्दर कूदता है तथा पेड़ से पेड़ पर लटकता है, मानव शिशु मुस्कराता है रोता है तथा बलबलाता है। इन सभी प्रत्युत्तरों को क्रिया कहा जाता है। स्कीनर का विचार था कि पर्यावरण उद्दीपक जीव को व्यवहार के लिए बाध्य नहीं करता है। क्रियाएँ जीव द्वारा

स्वयं प्रदर्शित होती है तथा क्रियाशील व्यवहार के लिए कोई पर्यावरणीय उद्दीपक नहीं होता है, यह सामान्यतय होता है।

क्रियात्मक अनुबन्ध की अनिवार्यता इस तथ्य पर आधारित होती है कि यदि सभी स्थितियाँ समान हों तो पुनर्बलित व्यवहार का देहरा होगा। पुनर्बलन की अवधारणा का स्किनर के सिद्धान्त में महत्वपूर्ण भूमिका है। स्किन के अनुसार एक प्रबलक एक उद्दीपक हैं जिसके पश्चात् प्रत्युत्तर होता है तथा किसी घटना की संभावना बढ़ जाती है। यदि एक कुत्ता एक गेंद पकड़ता है, जो क्रियात्मक व्यवहार का एक टुकड़ा है तथा प्रत्युत्तर के पश्चात् पीठ थपथपाना या किसी अन्य पुरस्कार के रूप में उसे पुनर्बलन प्राप्त हो तो कुत्ते के गेंद पकड़ने की संभावना बढ़ जायेगी। अतः एक पुनर्बलन किसी व्यवहार की पुनरावृत्ति को शक्तिशाली बनाता हैं। स्कीनर के अनुसार कुछ उद्दीपक सभी पशुओं के व्यवहारों के लिए पुनर्बलक होते हैं। यहाँ यह महत्वपूर्ण हैं कि एक प्रबलक उसके व्यवहार के प्रभाव के रूप में परिभाषित किया जा सकता है अर्थात् प्रत्युत्तर के संभावना में वृद्धि तथा इसे केवल सैद्धान्तिक रूप से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। अक्सर यह जानना कठिन है कि कौन ठीक ढंग से व्यवहार का प्रबलक होगा, क्योंकि यह व्यक्ति–व्यक्ति या पर्यावरण–पर्यावरण में भिन्न–भिन्न हो सकता है।

अतः इस दृष्टिकोण में केन्द्र बिन्दु प्रत्युत्तर के गुणों तथा उसके दरों तथा समय अन्तरालों के जिसके वे प्रबलित होते हैं, पर हैं। प्रबलक के समय एवं दर सम्बन्धों को प्रबलक की अनुसूचियाँ भी कहते हैं। इस समय–दर सम्बन्धों के अध्ययन हेतु स्किनर ने एक सरल उपकरण विकसित किया जिसे सामान्यतया स्कीनर के बाक्स के रुप में जाना जाता है। इस बक्से में कुछ उद्दीपक एवं व्यवहारों/प्रत्युत्तरों (जैसे चूहे द्वारा बटन दबाना या कबूतर द्वारा गोल थाल पर चोंच मारना) का एक वस्तुनिष्ठ ढंग से अवलोकन किया जाता है। इसमें कोई भी व्यक्ति व्यवहार के मूलभूत नियमों का सर्वश्रेष्ठ अवलोकन कर सकता है। स्कीनर के अनुसार व्यवहार को सर्वश्रेष्ठ ढंग से तभी समझा जा सकता है जब यह नियन्त्रित होता है। व्यवहार पर नियन्त्रण प्रत्युत्तरों के चयन प्रबलित होते हैं तथा वह दर जिस पर वे प्रबलित होते हैं के द्वारा किया जा सकता है। प्रबलन की अनुसूची का उपयोग एक निश्चित समय अन्तराल या एक निश्चित प्रत्युत्तरों के अन्तराल पर किया जा सकता है। एक समय अन्तराल अनुसूची में प्रबलन एक निश्चित अवधि जैसे एक मिनट के बाद होता है, वह प्राणी के द्वारा दिए गए प्रत्युत्तरों की संख्या से प्रभावित नहीं होता है। यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक एक मिनट पर चूहे या कबूतर

को बक्से में भोजन प्राप्त होता है। प्रत्युत्तर अन्तराल अनुसूची जिसे प्रत्युत्तर अनुपात अनुसूची भी कहते हैं, में प्रबलन एक निश्चित संख्या में प्रत्युत्तर होने के पश्चात् ही होता है। उदाहरण के लिए जब चूहा बटन को दस बार दबायेगा तब उसे बक्से में भोजन प्राप्त होगा।

अतः प्रत्येक प्रत्युत्तर पर प्रबलन देने की आवश्कता नहीं है, लेकिन यह निश्चित अवसरों पर दिया जा सकता है। प्रबलन एक नियमित या निश्चित आधार पर दिया जा सकता है– सदैव एक निश्चित संख्या के प्रत्युत्तरों पर, या सहचर के आधार दिया जा सकता है – कभी–कभी एक मिनट के बाद तथा कभी–कभी दो मिनट बाद या कभी–कभी कुछ प्रत्युत्तरों के बाद तथा कभी–कभी बहुत से प्रत्युत्तरों के बाद।

इसी प्रकार, जटिल व्यवहार क्रमिक सन्निकटन की प्रक्रिया के माध्यम से आकार धारण करता है। अर्थात् जटिल व्यवहारों का विकास व्यवहार के टुकड़ों के प्रबलन, जो एक व्यक्ति के उस अन्तिम व्यवहार के स्वरुप जिसका अभ्यास वह करना चाहता है द्वारा होता है। इसकी व्याख्या एक उदाहरण के द्वारा की जा रही है।

मान लीजिए हम स्कीनर बक्से के अन्दर के एक गोल थाल पर एक अप्रशिक्षित कबूतर द्वारा चोंच मारने का व्यवहार विकसित करना चाहते है। हम इस व्यवहार को आकार देने का क्रमिक सन्निकटन की प्रक्रिया द्वारा करते है। अर्थात् कबूतर एक पूर्ण एवं सहीं चोंच मारने का प्रत्युत्तर करें, के स्थान पर हम पहले कबूतर के कुछ व्यवहार का प्रबलन करते हैं जो उसके थाल पर चोंच मारने वाले अन्तिम व्यवहार को निर्मित करता है। इसलिए कबूतर जब भी थाल की दिशा में जाएगा हम उसे प्रबलन देंगे। जब कबूतर में स्थापित थाल में दिशा में जाने की एक निश्चित प्रवृत्ति हो जाती है तब तक हम प्रबलन को जारी रखेंगे। यह कार्य उन प्रत्युत्तरों को प्रबलित करके होगा जो कबूतर को थाल के और अधिक नजदीक लाए तथा इसके बाद वे प्रत्युत्तर रहे जो उसके चोंच को थाल के करीब लाएँ। इसी प्रकार अन्त में हम इस योग्य हो जाते हैं कि कबूतर को थाल पर चोंच मारने के लिए बाध्य कर सकें।

इसी प्रकार मनुष्यों में भी क्रमिक सन्निकटन द्वारा जटिल व्यवहार विकसित किए जा सकते हैं। इन सभी प्रकार के शिक्षण में सबसे अधिक जोर सकारात्मक पुनर्बलन जैसे भोजन, धन या प्रशंसा के उपयोग पर होता है। स्कीनर ने नकारात्मक पुनर्बलन के महत्व पर भी जो दिया है। एक सकारात्मक पुनर्बलन प्रत्युत्तर को बनाये रखने या मजबूत करने हेतु होता है जबकि नकारात्मक पुनर्बलन वे दुखदायी उद्दीपक होते हैं जिसे अधिगमित व्यक्ति अवसर मिलते ही समाप्त कर देंगे। उदाहरण के लिए आलोचना, अस्वीकृति, मित्र समूह द्वारा अस्वीकृत होना, आदि नकारात्मक प्रबलन के रूप हैं।

एक नकारात्मक प्रबलन के साथ दण्ड का भ्रम कभी–कभी रह जाता है किन्तु ये दोनों भिन्न है। नकारात्मक प्रबलन दुखदायी परिस्थितियों को समाप्त करने हेतु प्रत्युत्तर करने पर बल देता है। दण्ड प्रत्युत्तर के बाद होता है तथा व्यक्ति में दण्ड के बाद प्रत्युत्तर के आवृत्ति में कमी आती है। उदाहरण के लिए यदि व्यवहार अस्वीकृति या तिरस्कार होता है, एक व्यक्ति के प्रयासों के बाद उसे दण्ड प्राप्त हो तब यह कहा जा सकता है कि नकारात्मक प्रबलन का उपयोग हुआ।

अतः हम देखते है कि स्कीनर के सिद्धांत में सबसे अधिक ध्यान व्यावहारिक परिवहन दृष्टिकोण एवं परिवर्धन पर केन्द्रित किया गया है व्यक्तित्व विकास के क्षेत्र में इसकी व्यावहारिकता सबसे अधिक प्रसांगिक है।

सारांश

इसअध्याय द्वारा आप व्यक्तित्व के चार सिद्धांतों जो एरिक्सन, रोजर्स, मास्लो एवं स्कीनर ने दिए हैं, से परिचित हो गए होंगे।

एरिक्सन ने मानव जीवन चक्र के आठ अवस्थाओं के क्रम का प्रारूप दिया। प्रत्येक अवस्था एक संकट से जुड़ी होती है जो कि व्यक्तिगत जीवन का महत्वपूर्ण समय होता है जिसके द्वारा मनोवैज्ञानिक परिपक्वता एवं सामाजिक माँग व्यक्ति द्वारा इन अवस्थाओं में की जाती है। प्रत्येक मनोसामाजिक संकट में सकारात्मक एवं नकारात्मक तत्व सम्मिलित होते हैं। प्रत्येक संकट का सफल समाधान मनोसामाजिक शक्ति या गुण से सम्बद्ध होता है।

व्यक्तित्व के रोजर्स सिद्धांत में 'स्वयं' (Self) सबसे महत्वपूर्ण होता है। 'स्वयं' व्यक्ति के दृश्य प्रपंच या प्रात्याक्षिक (pereeopted Feild) से भिन्न एक हिस्सा है जिसे अनुभवों की संपूर्णता कहा जा सकता है। 'स्वयं' चेतनात्मक प्रत्यक्षीकरण दर्शाता है और 'मैं' और 'मुझे' का अर्थ बताता है। आदर्श आत्म (स्वयं) उस आत्म संप्रत्यय का प्रतिनिधित्व करता है जैसा व्यक्ति सबसे अधिक पसन्द करता है। एक व्यक्ति समायोजित परिपक्व एवं पूर्ण कार्यशील तब कहा जाता है जब उसके चेतन अनुभव जो उसके आत्म का निर्माण करते है पर्यावरणीय अनुभवों को प्रर्दशित करते है। अतः यह कहना कि व्यक्ति समायोजित है तब उसके विषयात्मक वास्तविकता (दृश्य प्रपंच क्षेत्र) तथा वाह्य वास्तविकता (जैसा विश्व है) के बीच समानता होनी चाहिए। जबकि इसके विपरित स्थिति में (पर्यावरण एवं आत्म के बीच असमानता) व्यक्ति को चिन्तित तथा परेशान करता है।

अब्राहम मास्लो के व्यक्ति का सिद्धांत आवश्यकता के सोपानों पर आधारित है। सुरक्षा की आवश्यकता दैहिक आवश्यकता के बाद की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है। तीसरे

आवश्यकता के रूप में अपनत्व एवं प्यार होता है। स्वाभिमान की आवश्यकता अपने एवं अन्य लोगों के लिए स्वाभिमान चौथे क्रम पर आती है। सबसे उच्च आवश्यकता मास्लों द्वारा आत्म विश्लेषण बतायी गयी है।

बी.एफ. स्कीनर ने मानव व्यक्तित्व के वृद्धि एवं विकास के पुनर्बलन की सूची पर जोर दिया है। पुनर्बलन ऋणात्मक हो सकता है और धनात्मक भी। पुनर्बलन के न्यायिक उपयोग के द्वारा व्यवहार के अंतिम स्वरूप को उत्पादित किया जा सकता है और यह पशु प्रशिक्षकों द्वारा किया जा सकता है। यह सिद्धांत इस मान्यता पर आधारित है कि मानव व्यवहार का प्रबंध पर्यावरणीय परिस्थितियों के द्वारा किया जा सकता है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

प्रवीन, लारेन्स (1984), *ए परसोनैलिटी थ्योरी एण्ड रिसर्चक्र,* जॉन विले एण्ड सन्स इन, न्यूयार्क

हजेले, लैरी, (1981), *ए एण्ड जिगलेर डामिल जे. : परनसोनैलिटी थ्यूरीज,* मैग्रा हिल बुक कम्पनी, न्यू देल्ही

हाल कैलविन (1998), एस. एण्ड लिन्डजे गार्डनर : *थ्यूरीज ऑफ परसोनैलिटी,* जॉन विले एण्ड सन्स इन, न्यूयार्क